IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

मोहन राकेश के नाटक 'आधे अधूरे' में मानवीय संबंधों का विश्लेषण

दीक्षा यादव

शोधार्थी

हिन्दी विभाग

राधा गोविन्द विश्वविद्यालय,रामगढ़ (झारखंड)

शोध सारांश

मोहन राकेश तीसरा नाटक 'आधे अधूरे' पारिवारिक संबंधों का मनोविज्ञान समझने–समझाने का एक और कलात्मक प्रयास है। यह नाटक आज के शहरी क्षेत्र में मध्यम वर्गीय पारिवारिक जिंदगी की विसंगति को उभारता है । यह नाटक मध्यमवर्गीय जीवन की शुष्क, विनाशकारी रिक्तता का प्रखर दस्तावेज है और विकृत मूल्यों, भ्रांतियों एवं दोगली नैतिकता का निर्मम अनावरण, जो उस रिक्तता के कारण है। इसके केंद्र में पत्नी के लिए प्रयत्न हैं, जो वह अपने बिखरते परिवार को बांधने के लिए करती है। उसकी विषय वस्तु जो बहुत ही सहज है। पति–पत्नी के बीच गलतफहमी, मनमुटाव, पति का नाराज होकर घर चले जाना, गरीबी की कारण परिवार में अशांति, स्त्री की दूसरी जगह में शांति खोजने की कोशिश और सबसे आखिर में पति का घर लौटना। अतः 'आधे अधूरे' में आधुनिक मध्यवर्गीय पति पत्नी के असंतोष और अधूरे पन का रेखांकन है।

मुख्य शब्द : मानवीय सम्बन्ध, तृष्णा, शांति, अधूरापन, रिक्तता, सम्बन्धों की विडम्बना।

प्रस्तावना

'आधे अधूरे' हिंदी साहित्य में नितांत भिन्न प्रकार का महत्वपूर्ण नाटक है और आज की समकालीन संवेदना का नाटक है। पहले दोनों नाटकों (आषाढ़ का एक दिन और लहरों के राजहंस) में ऐतिहासिक आवरण में आधुनिक संवेदना को व्यक्त किया गया था, लेकिन इसमें इतिहास के परिवेश से अपने को मुक्त करके सीधे सामाजिक परिवेश और आज के कटु यथार्थ को नाटक का आधार बनाया गया है। कहा भी गया है कि 'आधे अधूरे' आधुनिक भारतीय मध्यम वर्गीय परिवार में बिखराव और संत्रास की कहानी है।[1] इस नाटक में स्त्री पुरुष और दांपत्य संबंधों के दोगलेपन के साथ–साथ पारिवारिक विघटन के भी संकेत हैं और बहुत सुंदरता से प्रस्तुत किए गए हैं। पूरा परिवार अभिशापग्रस्त जैसा लगता है। परिवार का हर सदस्य एक –दूसरे से कटा हुआ है ,सबके मन के अंदर ज़हर ही ज़हर है। उसी विषाक्त वातावरण में सांस लेना उनकी मजबूरी है, हर सदस्य एक मौके की खोज में निकल भागने के अवसर की तलाश में है। बच्चों का व्यक्तित्व और दिल– दिमाग उसी वातावरण और व्यवहार के अनुसार बनता जा रहा है। माता–पिता के प्रिय आत्मीय संबंध न होने पर, उनकी रोज–रोज की गाली –गलौज ,मारपीट ,कटुता, अलगाव देखते रहने पर परिवार के अन्य सदस्य बच्चे किस तरह गलत राह पर जाते हैं। उनके स्वभाव ,व्यवहार, दृष्टि में कितना परिवर्तन आ जाता है इसका अच्छा चित्र सामने आता है। किसी को भी उस घर में अपने 'घर' की अनुभूति नहीं होती।[2] सभी इस घर में घुसते ही अव्यवस्था, बिखराव, अस्तव्यस्तता और अकेलापन महसूस करते है। समाज में जीवन यापन करने वाला मध्यम वर्गीय परिवार किस प्रकार एकता तथा अनेकता में परिवर्तित होता है इसका संकेत भी इस नाटक में दिया गया है

माननीय संबंध से अभिप्रायः

मानवीय संबंध से अभिप्राय समाज ने मानव का मानव के प्रति पारस्परिक मेलजोल है अर्थात पारिवारिक , सामाजिक ,राजनीतिक ,आर्थिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक सभी क्षेत्रों में मानव के आपसी संबंधों की चर्चा माननीय संबंध शीर्षक के अंतर्गत की जा सकती है। व्यक्ति(पुरुष और स्त्री) अपने परिवेश में एक दूसरे के साथ जो व्यवहार करता है जो संबंध स्थापित करता है, उसे ही मानवीय संबंध की संज्ञा दी गई है।[3]

'आधे अधूरे' नाटक में चित्रित मानवीय संबंध

मोहन राकेश ने 'आधे अधूरे' नाटक में पात्रों के व्यक्तित्व, किसी गहरी मानवीय स्थिति इंसानी संकट को उतना अभिव्यक्त नहीं किया जितना एक विशिष्ट व्यक्ति की स्थिति को। अधूरापन और संपूर्णता की खोज का द्वंद बहुत ही सृजनात्मक दृष्टि से मोहन राकेश ने प्रस्तुत किया है। मोहन राकेश ने पात्रों की खिजलाहट, आक्रोश , अधूरेपन की मार्मिक दुख भावना तथा उसकी टीस को अभिव्यक्त कर दिया है। आज उसे यह बात आभास हो गया है कि सभी पुरुष समान है। बस आकृतिगत अंतर है अर्थात कोई भी पूरी तरह समर्थ या सक्षम नहीं है। नाटक में टूटते ,बिखरते या संभलते ,सुधरते मानवीय संबंधों को निम्न बिंदुओं से अभिव्यक्त किया गया है। इस सम्बन्ध में 'ओम शिवपुरी का यह कथन दृष्टव्य है– ''यह समकालीन जिंदगी का पहला सार्थक हिंदी नाटक है। .....'आधे अधूरे' आज के जीवन के एक गहन अनुभव खण्ड को मूर्त करता है। इसके लिए हिंदी के जीवंत मुहावरें को पकड़ने की सार्थक, प्रभावशाली कोशिश की गई है।''[3ए]

नाटक में ट्रटते बिखरते या संभलते सुधरते मानवीय सम्बन्धों को निम्न बिन्दुओं से अभित्यक्त किया जा सकता है।

(क) स्त्री–पुरूष का सम्बन्ध

मोहन राकेश ने आधे अधूरे' नाटक में महेन्द्रनाथ तथा सावित्री देवी के माध्यम से स्त्री–पुरूष के सम्बन्धों के वास्तविक धरातल पर प्रस्तुत किया। डॉ. लक्ष्मीराय का कथन है कि, ''इसमें वर्तमान जीवन के यथार्थ परक और विश्वसनीय पात्रों, परिस्थितियों और मनःस्थितियों के साधन बिन्दुओं को रेखांकित किया गया है।''[4] आर्थिक विपन्नता से घिरा महेन्द्रनाथ जिसकी पत्नी सावित्री नामक महिला है। सावित्री परिवार में आर्थिक आय प्राप्त करने से परिवार के सर्वोच्च स्थान पर जा बैठती है। परिवार का जो सर्वोच्च स्थान उसके अंदर 'अहं भाव' जगाता है। इसीलिए वह महेन्द्रनाथ से कहती है– ''जो दो रोटी आज मिल जाती है मेरी नौकरी से, वह भी न मिल पाती। लड़की भी घर में रहकर ही बुढ़ा जाती, पर यह न सोचा होता किसी ने की.........।[5] परिवार का खर्चा चलाने के लिए सावित्री को नौकरी करनी पड़ती है। महेन्द्रनाथ सावित्री से बहुत प्रेम करता है। विवाह से पूर्व सावित्री भी उसे चाहती रही होगी, लेकिन आज जीवन में सावित्री की अनन्त और बहुमुखी आकांक्षाओं की पूर्ति करने में महेन्द्रनाथ असमर्थ है। सावित्री को लगता है – जब घर की आर्थिक स्थिति अच्छी थी तब महेन्द्रनाथ ने अपने परिवार की ओर ध्यान न देकर दोस्तों पर अधिक पैसे लुटाये। दोस्तों को दी जाने वाली पार्टियों में 'दावतें' और 'शराब' पर बेहिसाब खर्च किया। दूसरी ओर महेन्द्रनाथ को लगता है इस 'आर्थिक संकट' के लिए सावित्री ही जिम्मेदार है।[6] इसलिए सावित्री उससे घृणा करने लगी है। सावित्री को महेन्द्रनाथ से यह शिकायत रही है कि उसने उसे केवल बाह्य सुख देने का ही प्रयास किया है। जबकि वह उससे आंतरिक, मानसिक तृप्ति चाहती रही है। तभी तो वह सोचती है, ''इस प्रकार के व्यक्ति का होना क्या न होने से बेहतर नहीं था।'' उसे बेकार और निठल्ले महेन्द्रनाथ की पत्नी कहलाना भी मान्य

नही है। वह आवेश में जुनेजा से कहती है – ''मत कहिए मुझे महेन्द्र की पत्नी।''[7] तात्पर्य, वह अपने पति के रूप में एक कर्तव्यवान एवं सफल पुरूष को चाहती है।

सावित्री अब तो हमेशा महेन्द्र को फटकारते हुए बात करने लगी है, लेकिन महेन्द्रनाथ दब्बू बना उसकी सारी बातें स्वीकार करता है। वह परिवार से ही सवाल करता है – ''कितने साल हो चुके हैं मुझे जिंदगी का भार ढोते? उनमें से कितने साल बीते है मेरे इस परिवार की देख–रेख करते? और उस सबके बाद मै आज पहुंचा कहां हूं? यहां कि जिसे देखो वही मुझसे उलटे ढंग से बात करता है? जिसे देखो वही मुझसे बदतमीजी से पेश आता है?.....मै जानना चाहता हूं कि मेरी क्या यही हैसियत है इस घर में कि जो जब जिस वजह से जो भी कहे दे, मै चुपचाप सुन लिया करूं? हर वक्त की दुतकार, हर वक्त की कोंच, बस यही कमाई है यहां मेरी इतनी साल की?''[8] आर्थिक परावलंबिता एवं सावित्री के साथ परिवार की फटकार, महेन्द्रनाथ को मानसिक रूप से पूर्णतः अपाहिज बना देती है, जिसे वह सह न पाते हुए अपने–आपको कोसते हुए यह कहता है – ''अपनी जिंदगी चौपट करने का जिम्मेदार मै हूं। तुम्हारी जिंदगी चौपट करने का जिम्मेदार हूं। इन सबकी जिन्दगियां चौपट करने का जिम्मेदार मै हूं। फिर भी मै इस घर से चिपका हूं क्योंकि अंदर से मैं आरामतलब हूं, घरघुसरा हूं, मेरी हड्डियों में जंग लगा है।''[9] पति–पत्नी के सम्बन्धो की दृष्टि से महेन्द्र एक असफल और दुर्बल पति है जिसे एक अहंवादी आधुनिक स्त्री ने और स्थितियों ने असफल कर दिया। कुल मिलाकर हम कह सकते हैं कि इस नाटक में ''विभिन्न पात्रों के माध्यम से एक ही समस्या विभिन्न आयामों में उभरती है और वह है स्त्री–पुरूष के पारस्परिक सम्बन्धों की विसंगति। सावित्री के जीवन में आए हुए पुरूष पात्र अलग–अलग होते हुए भी महेन्द्रनाथ के व्यक्तित्व के किसी एक खंड को उभारते हैं।''[10] स्त्री–पुरूष के बिखरते सम्बन्धों

का यह खेल यहाँ तक पहुँच जाता है कि महेन्द्रनाथ अपने सम्मान को बचाने के लिए घर से चला जाता है, लेकिन चन्द घंटो बाद ही वापस भी आ जाता है। दोनों पति पत्नी मुक्त होना चाहते हैं, लेकिन महेन्द्रनाथ अपनी आन्तरिक विवशता के कारण तो सावित्री उपयुक्त पुरूष न मिलने के कारण एक–दूसरे को नहीं छोड़ पाते हैं। अतः एक विश्लेषक की दृष्टि से ओम शिवपूरी इसके विषय में लिखते हैं, ''यह आलेख एक स्तर पर स्त्री–पुरूष के बीच के लगाव और तनाव का दस्तावेज है।''[11] महेन्द्र सावित्री से बहुत प्रेम करता है। सावित्री भी उसे चाहती रही होगी, लेकिन ब्याह के बाद महेन्द्र को बहुत निकट से जानने पर उसे वितृष्णा होने लगी, क्योंकि जीवन से सावित्री की अपेक्षाएँ बहुमुखी और अनन्त हैं। अब महेन्द्रनाथ की बेकारी की हालत में सावित्री बहुत कटु हो गई हैं। एक ओर घर को चलाने का असह्य बोझ है तो दूसरी ओर जिन्दगी में कुछ भी हासिल न कर पाने की तीखी कचोट। इस संदर्भ में डॉ. लक्ष्मी राय कहते हैं कि – ''सावित्री और महेन्द्र के इस विसंगत और घुटन भरे दाम्पत्य जीवन में पारिवारिक विघटनशीलता का मार्मिक और अभिशप्त वातावरण से विच्छिन्न, कटा हुआ और अजनबी पाता है। इसमें बहुत बड़ा हाथ उस हवा का है जो महेन्द्र और सावित्री के बीच विद्यमान है और जिसमें परिवार के लड़के–लड़कियाँ सांस लेते हैं।''[12] अपने बच्चों के बर्ताव से अत्यन्त विरक्त हुई सावित्री बची खुची जिन्दगी को ही एक पूरे सम्पूर्ण पुरूष के साथ बिताने की आकांक्षा रखती है पर यह आकांक्षा पूरी नहीं हो पाती, क्योंकि सम्पूर्णता की तलाश ही शायद जवाब नहीं हैं'' ।[13] वास्तव में सावित्री की आंतरिक पूर्णता की तलाश और वैवाहित जीवन की विवशता पुरूष चार के शब्दों में सही रूप में व्यक्त हुई जहां पुरूष कहता है कि – ''असल बात इतनी ही है कि महेन्द्र की जगह इनमें से कोई भी आदमी होता तुम्हारी जिंदगी में, तो साल दो साल के बाद तुम यही महसूस करती कि तुमने एक गलत

आदमी से शादी कर ली है। उसकी जिंदगी में भी ऐसे ही कोई महेन्द्र, जुनेजा, कोई विश्वजीत या कोई जगमोहन होता जिसकी वजह से तुम यही सब सोचती, यही सब महसूस करती क्योंकि तुम्हारे लिए जीने का अर्थ रहा है – कितना कुछ एक साथ लोढ़कर जीना। वह इतना कुछ कभी तुम्हें किसी एक जगह न मिल पाता। इसलिए जिस किसी के साथ भी जिंदगी शुरू करती, तुम हमेशा उतनी ही खाली, उतनी ही बेचैन रहती।''[14] और फिर सावित्री की दृष्टि महेन्द्र पर ही टिक जाती है – ''जिंदगी में और कुछ हांसिल न हो तो कम से कम यह नामुराद मोहरा तो हाथ में बना ही रहे।''[15]

स्त्री–पुरूष सम्बन्धों में लगाव ओर तनाव बिन्नी तथा मनोज के माध्यम से भी लेखक ने प्रस्तुत किया है। इसलिए सबसे पहले परिवार की बड़ी लड़की 'बिन्नी' मनोज के साथ मौका मिलते ही चुपचाप एक रात 'घर' से भाग जाती है। किन्तु मनोज के 'घर' में भी जाकर वह सुखी नहीं होती। वहां भी वह अशांत रहती है। बिन्नी मनोज को खूब प्यार करती है। मनोज भी बिन्नी को पर्याप्त प्यार करता है, लेकिन अनतर मनोभाव में संतोष इस दम्पति को भी नहीं मिल रहा है। इसकी खोज में 'बिन्नी; फिर वापस घर आती है और घर आकर वह कहती है – ''मेरा अपना घर!....हां। और मैं आती हूं कि एक बार फिर खोजने की कोशिश कर देखूं कि क्या चीज है वह इस घर में जिसे लेकर बार–बार मुझे हीन किया जाता है। तुम बता सकती हो ममा, कि क्या चीज है वह ? और कहां है वह? इस घर के खिड़कियों–दरवाजों में? छत में? दीवारों में? तुम में? डैडी में? किन्नी में? अशोक में? कहां छिपी है वह मनहूस चीज जो वह कहता है मैं इस घर से अपने अंदर लेकर गयी हूं? बताओ ममा, क्या है वह चीज? कहां पर है वह इस घर में?''[16] बिन्नी अपनी माँ सावित्री से कहती है कि, ''दो आदमी

जितना ज्यादा साथ रहें, एक हवा में साँस लें, उतना ही ज्यादा एक–दूसरे को अजनबी महसूस करें?''[17]

अतः स्त्री–पुरूष सम्बन्धों में आया तनाव यहाँ स्पष्ट रुप से राकेश जी ने प्रस्तुत किया है। मनोज को बिन्नी के बालों का प्यारा लगना, उसका नौकरी करना पसन्द नहीं आना, पत्नी के प्रति प्यार को प्रदर्शित करता है। वहीं दूसरी ओर सम्बन्धों को बिखरेने वाली 'हवा' है जो उन दोनों के बीच से गुजरती है और बिन्नी अत्यन्त दुःख होकर ऐसी प्रतिक्रिया करने को उतारू हो जाती है जिससे उसके पति को ठेस पहुँचा सके, जैसा कि वह सावित्री से कहती है, ''जितने विश्वास के साथ बात कहता है, उससे... उससे मुझे अपने से एक अजब सी चिढ़ होने लगती है।''[18]

मन ...करता है...मन करता है आस पास की हर चीज को तोड़–फोड डालूँ कुछ ऐसा कर डालूँ[19] जिससे.... जिससे उसे मन को कड़ी से कड़ी चोट पहुँचा सकूँ। उसे मेरे लम्बे बाल अच्छे लगते हैं इसलिए सोचती हूँ इन्हें जाकर कटा आऊँ। वह मेरे नौकरी ढूँढकर कर लूँ। कुछ भी ऐसी बात जिससे एक बार तो वह अन्दर से तिलमिला उठे, पर कर मैं कुछ भी नहीं पाती और जब नहीं कर पाती तो खीजकर....।''[20] ओम शिवपुरी अपने मत को व्यक्त करते हुए कहते हैं कि, ''इसमें सावित्री, महेन्द्र नाथ, अशोक, बिन्दी और किन्नी आदि पात्रों के चरित्र द्वारा मध्यवर्गीय विघटनशील, पारिवारिक और दाम्पत्य जीवन में व्याप्त आक्रोश, असंगति तथा तिक्तता के स्वर सुनाई पड़ते हैं। यह एक स्तर पर स्त्री–पुरूष के बीच लगाव और तनाव का दस्तावेज है।''[21]''आधे–अधूरे'' के द्वारा मध्यवर्गीय परिवार को आर्थिक विषमता किस तरह से बिखरा देती है, इसका यथार्थ चित्रण कर उसे वह दर्शाया है कि आर्थिक विषमता का प्रभाव परिवार में केवल पति–पत्नी के सम्बन्धों को ही विघटित नहीं करता बल्कि

परिवार के अन्य सदस्यों के आपसी सम्बन्धों के बीच भी कई दरारें डाल देता है। उसके संदर्भ में डॉ. सुषमा अग्रवाल ने लिखा है – ''वस्तुतः राकेश ने सावित्री के रूप में एक सशक्त और जिंदादिल नारी का निर्माण किया है किन्तु अंततः है तो वह भी एक भारतीय नारी ही न।''[22] स्त्री–पुरूष के सम्बन्धों का कितना कटु यथार्थ राकेश जी ने इस नाटक में प्रस्तुत किया है, कितना मार्मिक बन पड़ा है यह सम्बन्ध ।

(ख) भाई बहन का सम्बन्ध

'आधे अधूरे' में महेन्द्रनाथ तथा सावित्री के दो पुत्रियाँ और एक पुत्र है। इनके लड़के का नाम अशोक तथा लड़कियों का बिन्नी और किन्नी है। बहन और भाई का प्राचीन में स्थापित यह पवित्र नाता आज समाज में दोष ग्रहण करता जा रहा है। इसी का खुलासा किया है मोहन राकेश के 'आधे अधूरे' नाटक ने अशोक और बिन्नी, किन्नी के माध्यम से। अशोक दोनों लड़कियों से आयु में बड़ा है। बिन्नी का मनोज के प्रति प्रेम और उसके साथ के विवाह में, वह विश्वास नहीं करता। उसे वह घर से भाग जाने का केवल एक मार्ग समझता है''....तू यह घर छोड़कर क्यों चली गई थी?.....तू मनोज से प्रेम करती थी। खुद तुझे ही यह गुट्टी बहुत कमजोर नहीं लगती?.....पहला मौका मिलते ही घर से चली गई।[23] बड़ी लड़की मनोज नामक व्यक्ति के साथ भाग कर चली गई तथा किन्नी (छोटी लड़की) जिसकी अवस्था 13 वर्ष है, स्कूल जाती है लेकिन यौन सम्बन्धों में वर्चस्व रखती है। अशोक भी अखबारों सें तस्वीर आदि काटता रहता है तथा बी.एस.सी. करने से पूर्व पढाई छोड़ बैठा है।

छोटी लड़की अपने भाई अशोक से 'शोकी' कहकर सम्बोधन करती है। बड़ी लड़की जब से झिड़कती है तो उसका जवाब सहज होता है कि क्या वह मारा मारा नहीं फिरता। बड़ी लड़की दुबारा उसे झिड़कती है 'किन्नी!' तो किन्नी अपनी बड़ी बहन से यह कहती है,

''तुम यहाँ थीं तो क्या कुछ कहा करती थीं, उसके बारे में? तुम्हारा भी तो बड़ा भाई है, चाहे एक ही साल बड़ा है, है तो बड़ा ही।''[24]

इतना ही क्यों बिन्नी अपनी सहेली सुरेखा नाम की लड़की के साथ उसके मम्मी–पापा विषयक अश्लील बाते करती है तो पीछे से अशोक वे बातें सुनता है और बिन्नी को पीटते–पीटते घर ले आता है। बिन्नी अपना गुस्सा प्रकट करती है और अशोक के किसी वर्णा सेन्टर वाली लड़की के सम्बन्ध तक को खुलेआम प्रचारित कर देती है। किन्नी अशोक के बारें मे बिन्नी को बताती है कि, ''क्योंकि मैं अपनी सब चीजें इसे नहीं ले जाने देती उसे देने।''

बड़ी लड़की, ''किसे देने?''

''वह जो इसकी...कभी मेरी बर्थ डे प्रजेन्ट की चूड़ियाँ दे आता है उसे। कभी मेरा प्राइज का फाउन्ठेन पेन। मैं अगर ममा से कह देती हूँ तो अकेले मेरा गला दबाने लगता है।''[25]

''किसकी बात कर ही है यहां।''

''झूठ मूठ मेरा फाउन्टेन पेन तेरी वर्णा के पास नहीं है?''

''वर्णा कौन?''

''वह उधोग सेन्टर वाली जिसके पीछे जूतियाँ चटकाता फिरता है।''[26]

बहन तथा भाई के पवित्र रिश्ते में इतने अश्लीलता प्रदर्शक शब्दों का प्रयोग आज के समाज में अवश्य शोभा देता है, हमारे वैदिककालीन समाज में नहीं। एक भाई अपनी सहोदरा से साथ ऐसी बातें सुनकर शर्म नहीं करता यह समय परिवर्तन का विकार यह विकास है। हाँ बहन जो अपने सहोदर को इतना अश्लील बताती है ऐसा वास्तविक यथार्थ चित्र प्रस्तुत करना मोहन राकेश के जीवट को ही सम्भव है। इस संदर्भ में गिरीश रस्तोगी ने कहा है – ''राकेश की दृष्टि में यह बेगानापन महसूस होना एक परिवार की नियति नहीं है, वह आज

की दुनिया में हर व्यक्ति की अनुभूति है,यही उसकी त्रासदी है जो उसके जीवन को बड़ा कटु और करूण बनाती जा रही है लेकिन आदमी को इस त्रासदी को अंततः झेलना ही है। सारी कटुता और तनाव के बावजूद जिंदगी एक ढ़र्रे पर चलती रहती है। कई बार कटने पर भी बार–बार फिर वही लौट आती है।

(ग) माता–पिता के सन्तान से सम्बन्ध

माता पिता के प्रति पुत्र तथा पुत्री के हदय में सम्मान, सेवा भावना, आज्ञाकारिता आदि गुण होने चाहिए। भगवान के माध्यम से तुलसी ने बताया है कि–

सुनि जननी सोई सुत बडभागी।

जो पित मातु वचन अनुरोगी।

लेकिन हमाा मानना है कि ''प्रत्येक पुत्र पिता का विरोधी होता है।'' अर्थात् प्राचीन परम्पराएँ परिवर्तित होती रहती हैं।

'आधे अधूरे' नाटक में राको जी ने पुत्र के माता तथा पिता के साथ सम्बन्धों को उद्‌धाटित करते हुए बताया है कि अशोक जी अनी माता के दफ्तर से आने वाले लोगो के प्रति रूखापन का व्यवहार करता है, जिससे सावित्री देवी अपने पुत्र से उदासीनता का व्यवहार करती हैं, लेकिन महेन्द्रनाथ के लिए अशोक चिन्तन करता रहता है। अपने पिता की सेवा भी करता है। नाटक के अंत में वह बाहर से आता है और बिन्नी को छड़ी निकालकर देने को कहता है। '....डैडी को स्कूटर–रिक्शा से उतारकर लाना है। उनकी तबीयत काफी खराब है।''[27] इसी समय बाहर से शब्द सुनाई देता है जैसे पांव फिसल जाने से किसी ने दरवाजे का सहारा लेकर अपने को गिरने से बचाया हो। वह आगे जाते हुए कहता है ''डैडी ही होंगे, उतरकर चले आए होंगे ऐसे ही। आराम से डैडी, आराम से......।''[28] उसे अपनी पिता

से काफी सहानुभूति है इसलिए बैठे हुए गले से उन्हें आराम से चलने को कहता है। लेकिन सावित्री से उसका प्रायः रूखा व्यवहार ही दिखाई देता है। सावित्री अपने कमाने योग्य बेटे अशोक को कहीं पर नौकरी से लगाना चाहती है और इसके लिए प्रयत्न भी बहुत करती है। ताकि उससे कुछ आर्थिक कठिनाइयां दूर हो और उसके ऊपर से पारिवारिक जिम्मेदारियों का बोझ कम हो तथा वह अपनी भी कुछ महत्वाकांक्षाओं की पूर्तता कर सके। परन्तु अशोक कुछ भी नहीं करता। यहां तक कि एक बार लगाई गई नौकरी को भी छोड़ देता है और न ही अन्य भी कुछ करने के विचार में है। उसे मां के पुरूष मित्रों द्वारा लगाई गई नौकरी मान्य नही है। यही नही तो उसे अपने मां के पुरूष मित्रों से घृणा है, जिससे वह विक्षुब्ध होकर सावित्री से कहता है – ''बुलाती क्यों हो ऐसे लोगों को घर पर कि जिनके आने से......? जिनके आने से हम जितने छोटे है, उससे और छोटे हो जाते हैं अपनी नजर में।''[29] सावित्री कहती है, ''मत कह नहीं कहना तो मैं मित्रत खुशामद से लोगों को घर पर बुलाऊँ और तू आने पर उनका मजाक उड़ाए उनके कार्टून बनाये ऐसी चीजें अब मुझे बिल्कुल बर्दाश्त नहीं है सुन लिया? बिल्कुल बर्दाश्त नहीं है। बर्दाशत नहीं है तो बुलाती क्यों हो, ऐसे लोगों को घर पर कि जिससे...।[30] बिन्नी के मन में अपने मां–बाप के प्रति आदर एवं स्नेह है। साथ ही वह मां के प्रति सहानुभूति रखती है, तो पिता के प्रति श्रद्धा और आक्रोश भी। अतः वह एक जगह मां के लिए सहानुभूति जताते हुए पिता के प्रति आक्रोश प्रकट करते हुए कहती है – ''जो तुमसे नहीं संभलता, वह और किससे संभल सकता है इस घर में......जान सकती हूं?.....जब से बड़ी हुई हूं, तभी से देख रही हूं। तुम सब–कुछ सहकर भी रात–दिन अपने को इस घर के लिए हलाक करती रही हो और.......।''[31] दूसरी ओर वह पिता के लिए आस्था भी रखती है। अतः पिता के घर छोड़कर जाने के पश्चात वह अपने भाई से पिता के

बारे में पूछती है। उन दोनों के लिए सैंडविच बनाती है। बहन–भाई के प्रति भी चिंता व्यक्त करती है। कुल मिलाकर वह विवाह के पश्चात भी अपने मायके वालों से जुड़ी हुई है। नाटककार ने नाटक में उसका परिचय 'छोटी लड़की' के रूप में देते हुए लिखा है –[32]

''छोटी लड़की : उम्र बारह और तेरह के बीच! भाव, स्वर, चाल–हर चीज में विद्रोह! फ्रॉक चुस्त, पर एक मोजे में सुराख।

स्पष्ट है – नाटककार ने किन्नी के संपूर्ण विद्रोही व्यक्तित्व को संकेतित किया है। उसका आचरण एवं उससे उभरने वाले उसके व्यक्तित्व के विभिन्न कोण, नाटक में उसके अन्यों के साथ किए गए निम्न संवादो के माध्यम से प्रकट हुए है –

''छोटी लड़की : कुछ पता नहीं चलता यहां तो। (तीनों में से केवल स्त्री उसकी तरफ देख लेती है।)

स्त्री : क्या कर ही है तू?

छोटी लड़की : बताओ, चलता है कुछ पता? स्कूल से आयी, तो घर पर कोई भी नहीं था। और जब आयी हूं, तो तुम भी हो, डैडी भी है, बिन्दी–दी भी है – पर सब लोग ऐसे चुप हैं जैसे........।

स्त्री : (उसकी तरफ आती) तू अपना बता कि आते ही चली कहां गई थी?

छोटी लड़की : कहीं भी चली गई थी। घर पर था कोई जिसके पास बैठती यहां?......दूध गरम हुआ है मेरा?

स्त्री : अभी हुआ जाता है।

छोटी लड़की : अभी हुआ जाता है। स्कूल में भूख लगे तो कोई पैसा नहीं होता पास में। और घर पर आने पर घंटा–घंटा दूध ही नहीं होता गरम।''[33]

बिन्नी को अपनी मां के अक्सर घर से बाहर रहने का खेद है। वह मां की कमी को महसूस करती है। उसे अपने घर को लेकर पड़ोसियों में होने वाली बुरी–बुरी बातों से भी दुःख होता है। क्योंकि वह उन लोगों के उलाहनों से हीन हो जाती है। अतः वह बहन बिन्नी या मां से पड़ोसियों के पास जाकर उन्हें खरी–खोटी सुनाने की तलबगार है। परन्तु घर में न उसकी मां रहती है और न ही बिन्नी से उत्तर देने में समर्थता पाती है। अतएव वह क्रोध में आकर सभी को 'मिट्टी के लोंदे' कहती है।

माता पुत्री के इस संवाद को भी यहाँ देखा जा सकता है जिसमें किन्नी सावित्री देवी को हाथ पकड़ कर सुरेखा के घर ले जाने की जिद करती है, ''चलती क्यों नहीं तुम मेरे साथ? चलो न।''

'''तू हटेगी या नहीं?''

''नही हटूंगी। उस वक्त तो घर पर नहीं थी, अब कहती हो...।''

''छोड़ केरी बाँहा।''

''नहीं छोड़ूँगी।''

''नहीं छोडेगी? (गुस्से बाँह छुड़ाकर उसे धकेलती है) बड़ा जोम चढ़ने लगा है तुझे।''

''हाँ चढ़ने लगाा है। जब कोई बात कहता है मुझसे, यहाँ किसी को फुरसत ही नहीं होती चलकर उससे पूछने की।''[34]

वास्तव में आज समाज में बहुत परिवर्तन आ गया है। माता पिता अपनी सन्तान के प्रति इतने जुड़े हुए दिखाई नहीं देते हैं। यही कारण है कि सन्तान उनसे आत्मीयता पूर्ण, सहदयता पूर्ण, श्रद्धा पूर्ण सम्बन्ध नहीं रख पाती है। अर्थात् अब इन सम्बन्धों में भी अभूतपूर्व बदलाव आ गया है। मोहन राकेश ने वास्तविक यथास्थिति से हमें यहाँ अवगत कराया है।

(ध) प्रेमी–प्रेमिका सम्बन्ध

'आधे अधूरे' में सावित्री तथा जगमोहन की, महेन्द्रनाथ तथा सावित्री का प्रेम बिन्नी मनोज को प्रत्यक्ष रुप से प्रेमी–प्रमिका के रूप में चित्रित किया है, लेकिन वर्णा तथा अशोक की कथा का संकेत भी इसी बिन्दु की ओर ध्यानकृष्ट करता है। महेन्द्रनाथ, सावित्री से असंतुष्ट है। उसके बहुत से कृत्यों से असहमत भी है। लेकिन फिर भी वह जुनेजा की नजर में सावित्री से बहुत प्रेम करता है। जुनेजा का यह कथन इसकी अभिव्यक्ति करता है – ''कोई समझा सकता है उसे? वह इस औरत को इतना चाहता है, इतना चाहता है अंदर से कि........फिर भी कहता हूं कि वह इसे बहुत प्यार करता है।.....अपनी आज की हालत के लिए जिम्मेदार महेन्द्रनाथ खुद है।[35] अगर ऐसा न होता तो आज सुबह से सही रिरियाकर मुझसे न कह रहा होता कि जैसे भी हो मै इससे बात करके इसे समझाऊँ।''बिन्नी, मनोज की प्रेमिका है, वह उसकी पत्नी भी है। प्रेमिका के नाते या पत्नी होने के नाते मनोज बिन्नी को पर्याप्त प्रेम करता है। साथ ही बिन्नी भी उसे खूब प्यार करती है, लेकिन शादी के पूर्व जो प्रेम था उसमें कमी आ जाती है। सावित्री की तरह बिन्नी भी पूरेपन के लिए तलबगार है। वह अपने दाम्पत्य जीवन से सुखी नहीं है। पति के रूप में मनोज जैसे स्वस्थ, सम्पन्न युवक को पाने के बाद भी वह उससे सुखी नही है। दोनों के बीच एक प्रकार का बेगानापन है–''शादी से पहले मुझे लगता था कि मनोज को बहुत अच्छी तरह जानती हूं। पर अब आकर.....अब

आकर लगने लगा है कि वह जाना बिल्कुल जानना नहीं था।''[36] बिन्नी भी अपने प्रेम–विवाह के पश्चात् भी पारिवारिक जीवन में असंतुष्टता पाती है। इसीलिए वह अपनी मां सावित्री से कहती है – ''यही तो मैं भी नहीं समझ पाती। पता नहीं, कहां पर क्या है जो गलत है!.....मै शायद समझा नहीं सकती......किसी दूसरे का तो क्या, अपने को भी नहीं समझा सकती।.... ममा, ऐसा भी होता है क्या कि......? कि दो आदमी जितना ज्यादा साथ रहें, एक हवा में सांस लें, उतना ही ज्यादा अपने को एक–दूसरे से अजनबी महसूस करें?''[37] स्त्री–पुरूष सम्बन्धों के लगाव और तनाव का दूसरा उदाहरण 'बिन्नी और मनोज' है। बिन्नी ने भी विवाह से पहले मनोज के साथ प्रेम का दम भरा था, लेकिन विवाह के बाद उसे मनोज के साथ रहना मुश्किल हो गया है। मनोज की भी यही स्थिति है। दोनों जितना ज्यादा साथ रहते है, उतना ही वे एक–दूसरे को अजनबी महसूस करते है। जैसा कि बिन्नी कहती है, ''मेरा मतलब है... कि शादी के पहले मुझे लगता था कि मनोज को बहुत अच्छी तरह जानती हूँ। पर अब आकर... अब आकर लगने लगा है कि वह जानना बिल्कुल जानना नहीं था।''[38]

सावित्री ओर जगमोहन के माध्यम से इस बिन्दु को लेखक ने बखूबी के साथ प्रस्तुत किया है। जगमोहन, सावित्री का पुराना प्रेमी है, जो सदा अपनी ही सुविधा के लिए जीता है। जब सावित्री अपनी जिंदगी से ऊबकर पुनः नया जीवन शुरू करने का फैसला करना चाहती है तब वह जगमोहन का ही सहारा पाना चाहती है। जगमोहन अपनी पुरानी प्रेमिका सावित्री के नयोतानुसार उसके घर आता है। अपने अवचेतन मन में सावित्री के प्रति प्रेम भाव रखते हुए भी अपनी वर्तमान परिस्थिति के संघर्ष में पड़कर दृढ़तापूर्वक कोई कदम उठाने में वह असमर्थ होता है। सावित्री की बातें से उसे सूचना मिलती है कि सावित्री ने आगे की जिंदगी उसके साथ बिताने का निर्णय लिया है। लेकिन सावित्री ने उस सम्बन्ध में कोई जवाब देने को वह

तैयार नहीं होता है। जगमोहन अति अवसरवादी व्यक्ति है और सावित्री के मनोविज्ञान को समझ जाने के कारण ही वह उससे घर पर जो बातें करनी है, करने को कहता है।

(जगमोहन) पुरूष तीन (हाथ सहलाता)– क्या बात है, कुकू?

स्त्री–मैं सच कह रही हूँ, जहाँ पहुँचने से डरती रही हूँ जिन्दगी भर। मुझे आज लगता है कि...।

पु.ती.– (हाथ पर हलकी थपकी देता) परेशान नहीं होते इस तरह।

स्त्री–मैं सच कह रही हूँ आज अगर तुम मुझसे कहो कि....।[39]

जगमोहन सावित्री को 'कुकू' डियर कहते हुए उसका उपभोग तो करता है किन्तु बच्चों की जिंदगी को लेकर, भविष्य में अपनी नौकरी की अनिश्चितता बताकर तथा इधर–उधर की बहुत सी उलझनों को सामने रखकर उससे अपना दामन छुड़ा लेता है।[40]

इतना ही नहीं अशोक और वर्णा को देखा जा सकता है। बिन्नी अपना गुस्सा प्रकट करती है और अशोक के किसी वर्णा सेन्टर वाली लड़की के सम्बन्ध तक को खुलेआम प्रचारित कर देती है। किन्नी अशोक के बारें मे बिन्नी को बताती है कि, ''क्योंकि मैं अपनी सब चीजें इसे नहीं ले जाने देती उसे देने।''

बड़ी लड़की, ''किसे देने?''

''वह जो इसकी...कभी मेरी बर्थ डे प्रजेन्ट की चूड़ियाँ दे आता है उसे। कभी मेरा प्राइज का फाउन्टेन पेन। मैं अगर ममा से कह देती हूँ तो अकेले मेरा गला दबाने लगता है।''[41]

''किसकी बात कर ही है यहा।''

''झूठ मूठ मेरा फाउन्ठेन पेन तेरी वर्णा के पास नहीं है?''

''वर्णा कौन?''

''वह उद्योग सेन्टर वाली जिसके पीछे जूतियाँ चटकाता फिरता है।''[42]

ये प्रेमी प्रेमिका के प्रेम सम्बन्धों का स्वाभाविक चित्र राकेश जी ने अपने नाटक में प्रस्तुत किए हैं।

(ड) कार्यालयी सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्ध

मोहन राकेश ने अपने आलोच्य नाटक में न केवल समाज के पारिवारिक मानव सम्बन्धों को प्रस्तुत किया है अपितु कार्यालय या दफ्तर के लोगों के साथ एक–दूसरे का व्यवहार कैसा होता है। इसे भी यथार्थ दृष्टि प्रदान की है। सिंघानिया एक ओर नैतिकता के गिरे जाने पर चिंता व्यक्त करता है, तो दूसरी ओर कार्यालयीन काम के बहाने सावित्री को घर बुलाकर उससे अपनी ''यौन'' तृप्ति करते हुए स्वयं ही अनैतिक आचरण करता है। अपनी मां विहीन बच्ची को प्यार देने का बहाना बनाकर कई 'आंटियों' को घर बुलाता है....''तुम घर पर आओ किसी दिन। बहुत दिनों से नही आयी।[43] वह पूछती रहती है, आंटी इतने दिनों से क्यों नहीं आयी? बहुत प्यार करती है अपनी आंटियों से। मां के न होने से बेचारी.....। सावित्री का अपने बॉस का बड़ा नम्रतापूर्वक अभिवादन करना, उसे घर बुलाना तथा बॉस का सावित्री को अपने घर बुला आदि को कार्यालयी सम्बन्ध ही कहा जायेगा। यथा–

''हाँ–हाँ–हाँ... तुम आओगी ही पर घर पर। दफ्तर की भी कुछ बातें करनी हैं। वही जो यूनिकयन ऊनियन का झगड़ा है।''[44]

(च) मित्र–मित्र का सम्बन्ध

'आधे अधूरे' में मित्रता के सम्बन्धों की चर्चा भी हमें देखने का मिलती है। जुनेजा और महेन्द्रनाथ अच्छे मित्र बताये गये हैं। जुनेजा अपने मित्र की प्रत्येक विपरीत परिस्थिति में सहायता करता है वहीं महेन्द्रनाथ अपने मित्र को कभी विस्मृत नहीं कर पाता है। महेन्द्रनाथ

अपने ही घर में उपेक्षित और तिरस्कारपूर्ण जीवन जी रहा है। जुनेजा को उससे सहानुभूति है और उसकी वास्तविकता से हमें परिचित कराता है। सावित्री अपने घर की बर्बादी का कारण जुनेजा को ही मानती है। लेकिन महेन्द्रनाथ उसे सच्चा मित्र मानता है। वह जब कभी भी घर से नाराज होकर निकलता है तब एकमात्र सहारा जुनेजा ही होता है। वह उसी के पास जाता है। जुनेजा अब तक महेन्द्रनाथ का काफी उपकार करता आया है। सावित्री से कहता है कि जुनेजा के यहाँ जाना है क्योंकि उसके कुछ पैसे थे, तो कम से कम पैसे नही ंतो अपनी शक्ल तो उसे दिखा ही आता। जुनेजा भी सावित्री देवी से ऐसा ही कहता है, ''मैं दोस्त हूँ उसका। उसे भरोसा है मुझ पर।''[45]

लेकिन सावित्री देवी की नजरों में इस दोस्ती की कोई कीमत नहीं है। उसे जुनेजा से कुढन है, ईर्ष्या है, द्वेष है, वह अपनी बर्बादी का कारण जुनेजा को मानती है।

(छ) परिवार का समन्वित सम्बन्ध

'आधे अधूरे' नाटक में एक मध्यम परिवार के समन्वित सम्बन्धों में कितना तनाव उत्पन्न हो गया है, कितना अलगाव, कितनी टूटन आ गई है, जिसे वास्तविक रुप से चित्रित किया गया है। एक परिवार का नेता का उसके समस्त परिवार के साथ सम्बन्ध है, घर के लोगों की नजरों में उसकी क्या अहमियत है। देखिए महेन्द्रनाथ के शब्द,''किसे सुना सकता हूँ? कोई है जो सुन सकता है? जिन्हें सुनना चाहिए वे सब रबड़ स्टेंप के सिवा कुछ समझते ही नहीं मुझे। इस जरूरत पड़ने पर इस स्टेंप का ठप्पा लगााकर... ।''[46]

आगे अपना वक्तव्य जारी रखता हुआ महेन्द्रनाथ कहता है, ''हाँ छोटी सी ही बात तो है यह। अधिकार, रूतबा, इज्जत यह सब बाहर के लोगों से ही मिल सकता है इस घर को।

इस घर का आज तक कुछ बना है या बन सकता है तो सिर्फ बाहर के लोगों के भरोसे। मेरे भरोसे तो सब कुछ बिगड़ता आया है और आगे बिगड़ ही बिगड़ सकता है। (लड़के की तरफ इशारा करके) यह आज तक बेकार क्यों धूम रहा है? मेरी वजह से (बड़ी लड़की की तरफ...) यह बिना बताये एक रात घर से क्यों भाग गई। मेरी वजह से। (स्त्री के बिल्कुल सामने आकर) और तुम भी तुम भी इतने सालों से क्या चाहती रही हो कि...?''[47]

निष्कर्ष :–

निष्कर्ष रूप में यही कहा जा सकता है कि मोहन राकेश के नाटक 'आधे अधूरे' मे वर्तमान जीवन की सत्रांतपूर्ण स्थितियो की संभावनाओं का संकेत दिया है जो स्त्री पुरुष संबंधों की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण है। मध्यमवर्गीय जीवन में आने वाली शुष्क और विनाशकारी रिक्तता को उघाडने वाला यह नाटक मनुष्य के खोखलेपन , संबंधों के सतहीपन तथा जीवन आदर्शों व आस्थाओं के लड़खड़ाते मानदंडों को सजीव रूप में प्रस्तुत करता है। आर्थिक विषमता ने किस प्रकार आज के दांपत्य जीवन में विषैला वातावरण उत्पन्न कर दिया है , अघोर मानसिक यंत्रणा से संत्रस्त मध्यवर्गीय स्त्री– पुरुष का जीवन के वास्तविक अर्थ की खोज का भटकाव– इन सब को नाटक यथार्थवादी शैली में उद्घाटित करता है। स्त्री पुरुष के लगाव व तनाव तथा पारिवारिक विघटन की गाथा अपने में अधूरे मनुष्य की काल्पनिक पूर्णता की खोज की महत्वकांक्षा की यातना को उजागर करती है। अतः हम कह सकते कह सकते हैं कि मोहन राकेश का 'आधे– अधूरे' नाटक वर्तमान की मध्यमवर्गीय परिवार के आपसी संबंधों का दस्तावेज है। इसके अतिरिक्त इसमें सीमित कथानक के माध्यम से विस्तृत भाव बोध कराया गया है। संबंधों का निर्धारण बहुत कुछ

परिस्थितियों के ऊपर आश्रित होता है। अतः संपूर्ण नाटक के पात्र अपनी परिस्थितियों के अनुकूल संबंध निर्धारण करने में सफल सिद्ध हुए हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ. पाण्डव कुमार, मोहन राकेश के नाटकों में मानवीय सम्बन्धों का विश्लेषण, जानकी प्रकाशन, दिल्ली, 2015, पृ. 76
2. डॉ. पाण्डव कुमार, मोहन राकेश के नाटकों में मानवीय सम्बन्धों का विश्लेषण, जानकी प्रकाशन, दिल्ली, 2015, पृ. 79
3. डॉ. जयकरण यादव, मोहन राकेश के नाटकों में मानवीय सम्बन्ध निरूस्पण एवं शिल्प विधान वैशिष्टय, पृ. 75

3ए. गिरीश रस्तोगी : मोहन राकेश और उनके नाटक, पृ. 113

4. डॉ. लक्ष्मी राय : आधुनिक हिंदी नाटक : चरित्र सृष्टि के आयाम : पृ.433
5. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं.25
6. डॉ. प्रतिभा येरेकार, मोहन राकेश के नाटकों में नारी, पृ. 71
7. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 109
8. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 57
9. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 40–41
10. ओम शिवपुरी : नटरंग अंग 21, पृ. 19
11. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 50
12. डॉ. लक्ष्मी राय : आधुनिक हिंदी नाटक : चरित्र सृष्टि के आयाम : पृ.436

13. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे', वकतव्य ओम शिवपुरी, पृ.सं. 7

14. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 108

15. डॉ. लक्ष्मी राय : आधुनिक हिंदी नाटक : चरित्र सृष्टि के आयाम : पृ.435

16. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 31–32

17. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 27

18. डॉ. प्रतिभा येरेकार, मोहन राकेश के नाटकों में नारी, पृ. 154

19. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 30

20. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 29–31

21. ओम शिवपुरी : आम के रंग नाटक, पृ. 345

22. डॉ. सुभाष अग्रवाल, अपने नाटकों के दायरे में, मोहन राकेश, पृ.सं.134

23. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 57, 61

24. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 32

25. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 84

26. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 62–63

27. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 96

28. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 97

29. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 73

30. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 53

31. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 37

32. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 11

33. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 34

34. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 81

35. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 103

36. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 28

37. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 45–46

38. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 28

39. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 71

40. डॉ. शारदा प्रसाद, मोहन राकेश के नाटक विषय और विधान, पृ.सं. 251

41. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 84

42. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 62–63

43. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 32

44. डॉ. शारदा प्रसाद, मोहन राकेश के नाटक विषय और विधान, पृ.सं. 307

45. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 85–86

46. मोहन राकेश, 'आधे अधूरे' पृ.सं. 44

47. डॉ. नीलम फारूकी, मोहन राकेश और उनका साहित्य, पृ.सं. 211